षष्ठः पाठः

सुधामुचः वाचः

महाकवीनां सूक्तयः सुभाषितानी वा अस्माकं जीवने पाथेयवत् साहाय्यं कुर्वन्ति सन्मार्गं च प्रदर्शयन्ति। विपदि निपतिताः मानवाः एतैः सुभाषितैः आश्वासनं प्राप्नुवन्ति प्रेरणां च गृह्णन्ति। संस्कृतवाङ्मयं सहस्रशः सुमधुरवचनैः सम्यग् अलङ्कृतं वर्तते। जीवनस्य प्रत्येकं क्षेत्रे प्रेरणाप्रदानानि एतानि सुभाषितानि साहित्ये सुलभानि सन्ति। अस्मिन् पाठे केषाञ्चित् अमृतवर्षिणां मधुरवचनानां सङ्कलनं अत्र प्रस्तूयते। यूयम् अपि अध्ययनं कृत्वा परियोजनारूपेण एतादृशमेव सङ्कलनं कर्तुं शक्नुथ।

शब्दार्थः— सूक्तयः—सुन्दर वचन। **सुभाषितानी**—सुन्दर वचन। **पाथेय**—वह भोज्य जिसे पथिक मार्ग में खाने के लिये ले जाता है, राहखर्च, सम्बल। **प्रदर्शयन्ति**—दिखाते हैं। **विपदि**—विपत्ति में। **निपतिताः**—पड़े हुए। **आश्वासनम्**—ढांढस, धैर्य को। **वाङ्मय**—इतिहास, साहित्य, काव्य। **सहस्रशः**—हज़ारों तरह, हज़ारों बार। **सम्यक्**—अच्छी प्रकार। **प्रेरणाप्रदानानि**—प्रेरणादायक। **संकलनम्**—एकत्रीकरण। **प्रस्तूयते**—प्रस्तुत किया जा रहा है।

सरलार्थ— महाकवियों की सूक्तियाँ अथवा सुभाषित हमारे जीवन में पाथेय (मार्ग-भोजन) के समान सहायता करते हैं और सन्मार्ग दर्शाते हैं। विपत्ति में पड़े हुए मानव इन सुभाषितों से ढांढस प्राप्त करते हैं और प्रेरणा ग्रहण करते हैं। संस्कृत-साहित्य हजारों प्रकार के अत्यधिक मधुर वचनों से अच्छी प्रकार अलंकृत (सजा हुआ) है। जीवन के प्रतयेक क्षेत्र में प्रेरणा प्रदान करने वाले ये सुभाषित साहित्य में आसानी से उपलब्ध हो सकते हैं। इस पाठ में कुछ अमृत बरसाने वाले मधुर वचनों का संकलन यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है। तुम भी अध्ययन करके योजना बनाकर इस प्रकार का ही संकलन कर सकते हो।

वदनं प्रसादसदनं सदयं हृदयं सुधामुचो वाचः।
करणं परोपकरणं येषां केषां न ते वन्द्याः।।1।।

अन्वयः— येषाम् वदनम् प्रसादसदनम्, हृदयम् सदयम्, वाचः सुधामुचः, करणम् परोपकरणम्, ते केषाम् न वन्द्याः?

शब्दार्थः—पर्यायवाचिशब्दाः टिप्पण्यश्च— **वदनम्**—मुखम् आननम्, मुख चेहरा, वेद् + ल्युट्। **प्रसादसदनम्**—प्रसादस्य प्रसन्नतायाः हर्षस्य। **सदनम्**—निकेतनम् गृहम् घर, निवासस्थानम्, प्रसादस्य सदनम्, षष्ठी तत्पुरुषः। **सदयम्**—दयया सहितम् बहुव्रीहिः, दया से भरा हुआ, दया से युक्त। **हृदयम्**—मनः, हृदय। **सुधामुचः**—सुधां अमृतम् मुञ्चति वर्षति इति सुधामुच्, उपपदः तत्पुरुष, प्रथमा विभक्तिः, बहुवचनम्, अमृतवर्षिण्यः, अमृत बरसाती हुई। **वन्द्याः**—वन्द, यत् पुं०, प्रथमा विभक्तिः, बहुवचनम्, वन्दनीयाः, वन्दनीय, प्रणम्य, प्रशंसनीय।

भावार्थ— ते जनाः सर्वत्र वन्दनीयाः भवन्ति येषां जीवनं परोपकाराय एव भवति। वस्तुतः तेषां जीवनस्य प्रमुखं लक्ष्यम् एवं परोपकारः अस्ति। ते सदैव अमृतवर्षिणीं मधुरां च वाणीं वदन्ति। तेषां वदनम् प्रसन्नतायाः निवासस्थानम् एव प्रतीयते। तेषां हृदयं दयापूर्णं भवति—

प्रसंग— यह श्लोक 'सुधामुचः वाचः' पाठ से, तथा मूलतः 'सुभाषितरत्नभाण्डागारम्' से लिया गया है। यहाँ मधुर मुख, मधुर वाणी से युक्त परोपकारी जनों को वन्दनीय कहा गया है।

सरलार्थ— जिन लोगों का मुख प्रसन्नता का निवास-स्थान है, हृदय दया से भरा है, वाणियाँ अमृत बरसाती रहती हैं, कार्य दूसरों की भलाई करना है, वे लोग किनके द्वारा वन्दनीय (प्रणम्य, प्रशंसनीय) नहीं हैं, अर्थात् वे लोग सबके द्वारा वन्दना के योग्य हैं।

व्याख्या— वे लोग सब जगह वन्दना (पूजा, प्रशंसा) के योग्य होते हैं जिनका जीवन परोपकार के लिए ही होता है। वस्तुतः उनके जीवन का प्रमुख लक्ष्य ही परोपकार है। वे सदा ही अमृत बरसाने वाली मधुर वाणी बोलते हैं। उनका मुख प्रसन्नता के निवास स्थान के समान प्रतीत होता है। उनका हृदय दया से भरा होता है।

शिक्षा क्षयं गच्छति कालपर्यया-
त्सुबद्धमूला निपतन्ति पादपाः।
जलं जलस्थानगतं च शुष्यति
हुतं च दत्तं च सदैव तिष्ठति।। 2।।

अन्वयः— कालपर्ययात् शिक्षा क्षयम् गच्छति। सुबद्धमूलाः पादपाः निपतन्ति। जलस्थानगतम् जलम् च शुष्यति। हुतम् च दत्तम् च सदैव तिष्ठति।

शब्दार्थः, पर्यायवाचिशब्दाः टिप्पण्यश्च— **कालपर्ययात्**—कालस्य समयस्य पर्ययात् परिवर्तनात्, काले व्यतीते सति, समय के बीत जाने पर, षष्ठी तत्पुरुषः। **शिक्षा**—शिक्षणम्, उपदेशः, शिक्षा। **क्षयं**—विनाशं, क्षीणताम्, न्यूनता को। **गच्छति**—याति, प्राप्नोति, प्राप्त करती है। **पादपाः**—पादैः पिबन्ति ते, वृक्षाः, वृक्ष। **सुबद्धमूलाः**—सुबद्धानि मूलानि येषां ते, प्रथमा, बहुवचनम्, मजबूत जड़ों वाले। **निपतन्ति**—नि √पत् लट्, प्रथम पु०, बहुवचनम्, पतनं यान्ति, गिर जाते हैं। **जलम्**—वारि, पानी। **जल-स्थान-गतं**—जलस्य स्थानं गतम्, षष्ठी, द्वितीया तत्पुरुषः, जलस्य गन्तव्यस्थानं गत्वा, (पानी) अपने गन्तव्य स्थान तक गया हुआ। **शुष्यति**—शुष्कं भवति, सूख जाता है। **हुतम्**—हु + क्त, अग्नौ। हविः रूपेण समर्पितम्, आग में दी गई आहुति। **दत्तम**—दा + क्त, दानम् कृतम्, प्रदत्तम्, दिया गया दान। **सततम्**—शाश्वतम्, सदा तक के लिए। **तिष्ठति**—स्था, लट्, प्रथम पु०, एकवचनम्, स्थितिं प्राप्नोति, रहता है। नष्टं न भवति, विराजते, स्थिर (स्थायी) रहता है।

भावार्थ— कालः परिवर्तनशीलः! सतत प्रवाहमाणेन कालेन सह विद्या अपि शनैः शनैः विस्मृता भवति। भौगोलिक परिवर्तन कारणात् कदाचित् सुदृढ़मूलाः वृक्षाः अपि विच्छिन्नाः मूला नश्यन्ति। जलस्य गन्तव्यं स्थानमपि कालेन जलहीनं भविष्यति परं यत्किमपि दत्तम् अर्थात् दानरूपेण दीयते पत् च हुतम् अर्थात् यज्ञाग्नौ हविष्यरूपेण दीयते, एतौ सततम् तिष्ठतः।

प्रसंग— प्रस्तुत श्लोक 'सुधामुचः वाचः' पाठ से तथा मूलतः भासकृत 'कर्णभारम्' नाटक से लिया गया है। इस पाठ में हवन और दान की महिमा का वर्णन है। उनका स्थायी प्रभाव होता है।

सरलार्थ— समय के बीत जाने पर शिक्षा भी विस्तृत हो जाती है। मजबूत जड़ों वाले पेड़ भी गिर जाते हैं। गन्तव्य स्थान पर गया हुआ जल भी सूख जाता है। किन्तु अग्नि में समर्पित की गई आहुति तथा परोपकार की भावना से किया हुआ दान सदा बना रहता है।

व्याख्या— समय परिवर्तनशील है, बदलता रहता है। सदा गतिमान काल से सह विद्या भी धीरे-धीरे भूल जाती है। भौगोलिक परिवर्तन के कारणों से कभी-कभी मजबूत जड़ों वाले वृक्ष भी ठूँठ (जीर्ण-शीर्ण) होकर नष्ट हो जाते हैं। गन्तव्य स्थान पर जाने के बाद वह जलवाला स्थान भी जल से रहित हो जाता है। यदि कुछ स्थायी रहता है तो उसमें एक है, दिया गया दान तथा दूसरी वस्तु है, अग्नि में समर्पित आहुति। शेष सब नष्ट हो जाते हैं।

यथा चतुर्भिः कनकम् परीक्ष्यते
निघर्षणच्छेदनतापताडनैः।
तथा चतुर्भिः पुरुषः परीक्ष्यते
त्यागेन शीलेन गुणेन कर्मणा।। 3।।

अन्वयः— यथा निघर्षण-छेदन-ताप-ताडनैः चतुर्भिः कनकम् परीक्ष्यते तथा त्यागेन शीलेन गुणेन कर्मणा (इति) चतुर्भिः पुरुषः परीक्ष्यते।

शब्दार्थः, पर्यायवाचिशब्दाः टिप्पण्यश्च— **कनकम्**—सवुर्णम्, सोना। **चतुर्भिः**—चतुर्भिः प्रकारैः, चार प्रकार से। **निघर्षणः**—घर्षणेन, घिसाकर। **छेदनं**—छेदनेन, काटकर। **ताप**—तापेन, तपाकर। **ताडनैः**—कुट्टनेन, कूटने से। **परीक्ष्यते**—परि + ईक्ष्, कर्मवाच्य, लट्, प्रथम पु०, एकवचनम्, परखा जाता है। परीक्षणं क्रियते।

भावार्थ— सुवर्णस्य परीक्षणं चतुर्भिः प्रकारैः भवति—घर्षणेन, कर्तनेन ऊष्मकरणेन, कुट्टनेन च। सुवर्णक्त पुरुषस्य परीक्षणम् अपि चतुर्भिः प्रकारैः भवति, यथा—(*i*) त्यागेन, (*ii*) शीलेन, (*iii*) गुणेन, (*iv*) कर्मणा।

प्रसंग— प्रस्तुत श्लोक पाठ्यपुस्तक के 'सुधामुचः वाचः' पाठ से तथा मूलतः 'चाणक्यनीति' से लिया गया है। इस पद्य में त्याग, शील, गुण तथा कर्म के आधार पर पुरुष की परीक्षा का विधान बताया गया है। पुरुष परीक्षा की तुलना सुवर्ण परीक्षा से की गई है।

सरलार्थ— सोने की परख जैसे उसे रगड़ने, काटने, गर्म करने तथा कूटने से होती है, उसी प्रकार पुरुष की परख भी चार प्रकार से होती है—(*i*) त्याग से (*ii*) शील-सदाचार से (*iii*) गुणों से, (*iv*) कार्यों से।

व्याख्या— जिस प्रकार से खरे-खोटे सोने को पहचानने के चार प्रकार (घर्षण, छेदन, ताप तथा ताडन) हैं, उसी प्रकार पुरुष को परखने के लिए भी चार प्रकार होते हैं—(*i*) त्याग, (*ii*) शील-सदाचार, (*iii*) गुण तथा, (*iv*) कर्म।

व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं
भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः।
प्रविश्य हि घ्नन्ति शठास्तथाविधा
नसंवृत्ताङ्गान्निशिता इवेषवः।। 4।।

अन्वयः— ये मायाविषु मायिनः न भवन्ति, ते मूढधियः पराभवम् व्रजन्ति। शठाः हि निशिताः इषवः इव तथाविधान् असंवृत्ताङ्गान् प्रवश्यि घ्नन्ति।

शब्दार्थः, पर्यायवाचिशब्दाः टिप्पण्यश्च— ते—तत्, प्रथमा, बहुवचनम्, तादृशाः जनाः, वे लोग। **मूढधियः**—मूर्ख-बुद्धयः, मूढाधीः येषां, अविवेकिनः, अविवेकी, मूर्खबुद्धि। **पराभवं**—पराजयं, पराजय को, हार को, अपमान को, व्रजन्ति, गच्छन्ति, प्राप्नुति, प्राप्त करते हैं, स्वीकुर्वन्ति, स्वीकार करते हैं। **ये**—जो जन्, यत्, प्रथमा, बहुवचनम्। **मायाविषु**—माया + विन्, स०, ब० व०, कपटिषु, कपटी लोगों में। **मायिनः**—माया + इन्, प्रथमा, बहुवचनम्, कपटिनः, कपटी। **न भवन्ति**—न सन्ति, नहीं होते। **शठाः**—धूर्ताः, धूर्त लोग। **तथाविधान्**—तत्प्रकारान्, उस प्रकार के। **असंवृताङ्गान**—न संवृतानि असंवृतानि, असंवृतानि अङ्गानि येषां तान्, येषाम् अङ्गानि वस्त्र-कवचादिभिः आवृतानि न सन्ति तान्, खुले हुए अंगोवाले लोगों को। **प्रविश्य**—प्र विश् ल्यप्, प्रवेश कृत्वा, प्रवेश करके। **निशिताः**—नि + शि + क्त, तीक्ष्णाः, तीक्ष्ण। **इषवः**—इषु, प्रथमा, बहुवचनम्, बाणाः, शराः, बाण। **घ्नन्ति**—हन् लट् प्र० पु०, ब० व०, मारयन्ति, मार डालते हैं।

भावार्थ— ये जनाः कपटिषु कपटपूर्णम् आचरणं न कृत्वा सरलतया एव व्यवहारन्ति ते मूढाधियः सदैव तिरस्कृतः उपेक्षिताः भवन्ति। यथा बाणा अनावृत्तं शरीरं प्रविश्य विनाशयन्ति तथैव शठाः अकुटिलान् जनान् वञ्चयित्वा तान् विनाशयन्ति।

प्रसंग— प्रस्तुत पद्य पाठ्यपुस्तक के 'सुधामुचः वाचः' पाठ तथा मूलतः 'किरातार्जुनीयम्' (भारविकृत) से लिया गया है। इस श्लोक में कूटनीति के मूल सिद्धान्त को प्रस्थापित किया गया है।

सरलार्थ— जो कपटियों के प्रति कपटी नहीं होते, वे मूर्ख बुद्धि लोग पराजय को प्राप्त करते हैं। जिस प्रकार तीखे बाण खुले अंगों वाले शरीरों में प्रवेश करके प्रताड़ित करते हैं वैसे ही धूर्त लोग छिद्रों को ढूँढकर उनमें प्रवेश करके भोले-भाले लोगों को मार डालते हैं।

व्याख्याः— जो लोग कपट भरे लोगों के प्रति कपटपूर्ण व्यवहार नहीं करते अपितु, उनके साथ भी सरलता का व्यवहार करते हैं, वे मूर्ख बुद्धि लोग सदा तिरस्कृत और उपेक्षित होते हैं। जैसे बाण खुले शरीर में प्रवेश कर उसे नष्ट कर डालते हैं वैसे ही धूर्त जन सरल व्यक्तियों को ठगकर उन्हें मरवा देते हैं।

स किंसखा साधु न शास्ति योऽधिपं—
हितान्न यः सं शृणुते स किंप्रभुः।
सदानुकूलेषु हि कुर्वते रतिं
नृपेष्वमात्येषु च सर्वसम्पदः।। 5।।

अन्वयः— यः अधिपम् साधु न शास्ति स किंसखा। यः हितान् न संश्रृणुते स किंप्रभुः। नृपेषु अमात्येषु च अनुकूलेषु हि सर्वसम्पदः सदा रतिम् कुर्वते।

शब्दार्थः, पर्यायवाचिशब्दाः टिप्पण्यश्च— किंसखा—कुत्सितः सखा, बुरा अयोग्य मित्र। **साधु**—सम्यक्, क्रियाविशेषणम्, भली प्रकार। **अधिपम्**—राजानाम्, सम्राजम्, राजा को, सम्राट को, अधिसमन्तात् पाति रक्षति सः अधिपः, **हितान्**—उपदेशान्

मन्त्रणाम्, हितकार सलाहों को। **किंप्रभु**—कुत्सितः स्वामी, बुरा अयोग्य मालिक। **अनुकूलेषु**—अनुकूल, सप्तमी, बहुवचनम्, समदृष्टियुक्तेषु, समदृष्टि होने पर। **सर्वसम्पदः**—सर्वाः सम्पदः सम्पत्तः, सारी सम्पत्तियाँ, ऐश्वर्य।

भावार्थ— यः नृपाय सत्यपरामर्शं ददाति स एव योग्यः अमात्यः। यः राजा हितोपदेशकस्य मन्त्रिणः उपदेशं स्वीकरोति स एव योग्यः स्वामी। यत्र राजा मन्त्रिणश्च परस्परं विश्वस्तः सर्वकार्यं सम्पादयन्ति तस्मिन् राज्ये एव सर्वासां सम्पत्तीनां निवासः भवति।

प्रसंग— प्रस्तुत श्लोक 'सुधामुचः वाचः' पाठ से तथा मूलतः भारविकृत 'किरातार्जुनीयम्' महाकाव्य से लिया गया है। इसमें राजा और मन्त्री एक-दूसरे के अनुकूल होने पर ही सम्पत्ति प्राप्त कर सकते हैं, यह दर्शाया गया है।

सरलार्थ— जो (मित्र, सचिव, अमात्य, मन्त्री) अपने स्वामी (सम्राट्, राजा) को अच्छी प्रकार से परामर्श (उपदेश) नहीं देता वह कुत्सित (निन्दित, अयोग्य) मित्र (सचिव) होता है (अर्थात् वह योग्य मित्र नहीं होता)।

जो (प्रभु, स्वामी, सम्राट्, राजा) मित्रों (भला चाहनेवालों) के हितकारक वचनों पर अच्छी प्रकार ध्यान नहीं देता (ठीक प्रकार से उन्हें नहीं सुनता) वह कुत्सित (निन्दित, अयोग्य) स्वामी (सम्राट्, राजा, प्रभु) होता है (अर्थात् ऐसा स्वामी भी योग्य स्वामी नहीं होता)। राजाओं के तथा मन्त्रियों के अनुकूल (परस्पर समान दृष्टिवाला) होने पर सब प्रकार की सम्पत्तियाँ सदा उनसे प्रेम करती हैं (प्रीतिपूर्वक उनके पास उपस्थित रहती हैं और उन्हें आनन्द देती हैं।)

व्याख्याः— जो मन्त्री राजा को ठीक सलाह देता है वही योग्य मन्त्री है। जो राजा ठीक सलाह देनेवाले मन्त्री की सलाह को स्वीकार करता है, वही योग्य स्वामी है। जहाँ राजा और मन्त्री परस्पर विश्वास करते हुए सर्व कार्य सम्पन्न करते है, उस राज्य में ही सदा सब सम्पदाओं का निवास होता है।

लोभश्चेदनगुणेन किं पिशुनता यद्यस्ति किं पातकैः
सत्यं चेत्तपसा च किं शुचिमनो यद्यस्ति तीर्थेन किम्।
सौजन्यं यदि किं गुणैः सुमहिमा यद्यस्ति किं मण्डनैः,
सद्विद्या यदि किं धनैरपयशो यद्यस्ति किं मृत्युना।। 6।।

अन्वयः— लोभः चेत् (तदा) अगुणेन किम्, यदि पिशुनता अस्ति पातकैः किम्। चेत् सत्यम् तपसा च किम्, यदि शुचि मनः अस्ति तीर्थेन किम्, यदि सौजन्यम् गुणैः किम्, यदि सुमहिमा अस्ति मण्डनैः किम्, यदि सद्विद्या धनैः किम्, यदि अपयशः अस्ति मृत्युना किम्।

शब्दार्थः, पर्यायवाचिशब्दाः टिप्पण्यश्च— अगुणेन—न गुणेन, अवगुण से। **पातकैः**—पापैः पापों से। **शुचिमनः**—पवित्रं मनः, पवित्र मन। **सौजन्यं**—सुजन + यत, सुजनता का भाव। **सुमहिमा**—शोभना महिमा। **सद्विद्या**—श्रेष्ठ विद्या। **यद्यस्ति**—यदि + अस्ति। **लोभश्चेदगुणनः**—लोभ + चेत् + अगुणेन।

भावार्थ— यदि लोभः अस्ति तदा गुणेन प्रयोजनं नास्ति? परनिन्दायाः भावः यदि जीवने आगतः तदा पातकैः प्रयोजनं न भवति। सत्ये सति तपसाम् आवश्यकता न भवति। पवित्रे मनासि तीर्थानाम् आवश्यकता न भवति। सज्जनतायां सत्याम् अन्य गुणानाम् आवश्यकता न भवति। यदि शोभना महिमा वर्तते तदा अलंकाराणाम् आवश्यकता एव न अस्ति। सद्विद्यायां सत्याम् अन्यैः धनैः प्रयोजनं न भवति। अपकीर्तिः तु मृत्योः अपि कष्टतरा भवति। अपयशः कृत्योः अपि अधिकं कष्टकारकं भवति इति तात्पर्यार्थं।

प्रसंग— पाठ्यपुस्तक के 'सुधामुचः वाचः' से किन्तु मूलतः भर्तृहरि के 'नीतिशतकम्' से यह श्लोक लिया गया है। यहाँ लोभ, परनिन्दा, सत्य, मन की पवित्रता, सज्जनता, सुमहिमा, सद्विद्या और अपयश की तुलना क्रमशः अवगुणों, पापों, तपों, तीर्थों, गुणों, अलंकारों, धन-सम्पदाओं तथा मृत्यु से की गई है तथा पहले के तत्वों को ज्यादा प्रभावी बताया गया है।

व्याख्या— लोभ होने पर अन्य अवगुणों की आवश्यकता नहीं, परनिन्दा में रुचि होने पर अन्य बुराईयों की आवश्यकता नहीं, सत्य का गुण होने पर तप की आवश्यकता नहीं। मन के पवित्र होने पर तीर्थो की आवश्यकता नहीं। सज्जनता होने पर गुणों की आवश्यकता नहीं, अच्छी महिमा होने पर अलंकारों की आवश्यकता नहीं, सद्विद्या हो तो और धनों से कोई प्रयोजन नहीं तथा अपयश हो तो वही सबसे बड़ा कष्टकर है। फिर तो मृत्यु से भी कोई प्रयोजन नहीं रहता।

सरलार्थ— यदि लोभ है तो और अवगुणों से क्या प्रयोजन? यदि चुगलखोरी, निन्दा है तो अन्य बुराईयों (पापों) से क्या प्रयोजन? यदि सत्य है तो तप से क्या प्रयोजन? यदि मन पवित्र है तो तीर्थ से क्या प्रयोजन? यदि सज्जनता है तो अन्य गुणों से क्या प्रयोजन? यदि अच्छी महिमा है तो और आभूषणों से क्या प्रयोजन? यदि अच्छी विद्या है तो धनों से क्या प्रयोजन, यदि अपयश है तो मृत्यु से क्या प्रयोजन?

अनुप्रयुक्त-व्याकरणम्

पाठाधारिताः सन्धिविच्छेदाः

सुधामुचो वाचः	=	सुधामुचः + वाचः	**परोपकरणम्**	=	पर + उपकरणम्
सदैव	=	सदा + एव	**परीक्ष्यते**	=	परि + ईक्ष्यते
निघर्षणच्छेदन	=	निघर्षण + छेदन	**निशिता इव**	=	निशिताः + इव
शठास्तथाविधान्	=	शठाः + तथाविधान्	**योऽधिपम्**	=	यः + अधिपम्
इवेषवः	=	इव + इषवः	**सदानुकूलेषु**	=	सदा + अनुकूलेषु
स किंसखा	=	सः + किंसखा	**यद्यस्ति**	=	यदि + अस्ति
हितान्न	=	हितात् + न	**सद्विद्या**	=	सत् + विद्या
नृपेष्वमात्येषु	=	नृपेषु + अमात्येषु	**यद्यस्ति**	=	यदि + अस्ति
लोभश्चेद्गुणेन	=	लोभः + चेत् + आगुणेन	**मनो यद्यस्ति**	=	मनः + यदि + अस्ति
धनैरपशो यदि	=	धनैः + अपयशः + यदि			

पाठाधारिताः समासविग्रहाः

समस्तपदानि	**विग्रहाः**	**समास-नाम**
प्रसादसदनम्	प्रसादस्य सदनम्	षष्ठी तत्पुरुषः
सदयम्	दयया सह वर्तमानम्	बहुव्रीहिः
सुधामुचः	सुधाम् मंचन्ति इति	उपपद तत्पुरुषः
परोपकरणम्	परेषाम् उपकरणम्	षष्ठी तत्पुरुषः
कालपर्ययात्	कालस्य पर्ययः, तस्मात्	षष्ठी तत्पुरुषः
सुबद्धमूलाः	सुबद्धानि मूलानि येषां ते	बहुव्रीहिः
पादपाः	पादैः पिबन्ति इति	उपपद तत्पुरुषः
जलस्थानगातम्	– जलस्य स्थानम्,	षष्ठी तत्पुरुषः
	– जलस्थानं गतम्	द्वितीया तत्पुरुषः
निघर्षणच्छेदन	– निघर्षणं चे छेदनं च	
तापताडनैः	तापः च ताडनम् च, तैः,	द्वन्द्व
मूढधियः	मूढा धीः येषाम् ते	बहुव्रीहिः
असंवृताङ्गान्	न संवृतानि असंवृतानि	नञ् तत्पुरुषः
	– असंवृतानि अंगानि येषां तान्	बहुव्रीहिः
किंसखा	कुत्सितः सखा	कर्मधारयः
किंप्रभुः	कुत्सितः प्रभुः	कर्मधारयः
सर्वसम्पदः	सर्वाः सम्पदः	कर्मधारयः
अगुणेन	न गुणः अगुणः, तेन	नञ् तत्पुरुषः
सुमहिमा	शोभनः महिमा	कर्मधारयः
सद्विद्या	शोभनः विद्या	कर्मधारयः

अनुप्रयोगस्य प्रश्नोत्तराणि

प्रश्न 1. सम्बद्धाः पङ्क्ती मेलयत—

'अ' स्तम्भः	'ब' स्तम्भः
(i) करणं परोपकरणं येषां	(क) हुतं च दत्तं च सदैव तिष्ठति।
(ii) तथा चतुर्भिः पुरुषः परीक्ष्यते	(ख) यद्यस्ति किं मृत्युना?
(iii) जलं जलस्थानगतं च शुष्यति	(ग) सुबद्धमूलाः निपतन्ति पादपाः।
(iv) सद्विद्या यदि किं धनैरपयशो	(घ) केषां न ते वन्द्याः?
(v) वदनं प्रसादसदनं सदयं हृदयं	(ङ) भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः।
(vi) शिक्षा क्षयं गच्छति कालपर्ययात्	(च) नृपेष्वमात्येषु च सर्वसम्पदः।
(vii) सदानुकूलेषु हि कुर्वते रतिम्	(छ) सुधामचो वाचः।
(viii) व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं	(ज) त्यागेन शीलेन गुणेन कर्मणा।

उत्तरम्—

'अ' स्तम्भः	'ब' स्तम्भः
(i) करणं परोपकरणं येषां	(घ) केषां न ते वन्द्याः?
(ii) तथा चतुर्भिः पुरुषः परीक्ष्यते	(ज) त्यागेन शीलेन गुणेन कर्मणा।
(iii) जलं जलस्थानगतं च शुष्यति	(क) हुतं च दत्तं च सदैव तिष्ठति।
(iv) सद्विद्या यदि किं धनैरपयशो	(ख) यद्यस्ति किं मृत्युना?
(v) वदनं प्रसादसदनं सदयं हृदयं	(छ) सुधामचो वाचः।
(vi) शिक्षा क्षयं गच्छति कालपर्ययात्	(ग) सुबद्धमूलाः निपतन्ति पादपाः।
(vii) सदानुकूलेषु हि कुर्वते रतिम्	(च) नृपेष्वमात्येषु च सर्वसम्पदः।
(viii) व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं	(ङ) भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः।

प्रश्न 2. अधोलिखितप्रश्नानाम् उत्तराणि एकपदेन दीयन्ताम्—

(i) वन्द्यानां जनानां मुखं कीदृशं भवति?
(ii) केषां वाणी सुधामयी कथिता?
(iii) कालपर्यात् का क्षयं गच्छति?
(iv) कीदृशाः पादपाः अपि निपतन्ति?
(v) सुवर्णस्य परीक्षणं कतिभिः प्रकारैः भवति?
(vi) पवित्रे मनसि केषाम् आवश्यकता न भवति?
(vii) मृत्योः अपि कष्टतरं किम् भवति?
(viii) कस्यां सत्याम् अन्यैः धनैः प्रयोजनं न भवति?
(ix) केषु मायिनः इति भवितव्यम्?
(x) यः अधिपं साधु न उपदिशाति स कः उच्यते?

उत्तरम्—

(i) प्रसादसदनम्	(ii) वन्द्यानाम्
(iii) शिक्षा	(iv) सुबद्धमूलाः
(v) चतुर्भिः	(vi) तीर्थानाम्
(vii) अपयशः	(viii) सद्विद्यायाम्
(ix) मायाविषु	(x) किंसखा

प्रश्न 3. अधोलिखितपदेषु सन्धिं कुरुत परिवर्तनं निर्दिशत—

(i) लोभः	+	चेत्	लोभश्चेत्	: → श्
(ii) सत्	+	विद्या	....	....
(iii) इव	+	इषवः	....	....
(iv) किम्	+	प्रभुः	....	....
(v) सदा	+	अनुकूलेषु	....	....
(vi) यदि	+	अस्ति	....	....
(vii) धनैः	+	अपयशः	....	....
(viii) सम्	+	शृणुते	....	....
(ix) शठाः	+	तथाविधान्	....	....
(x) नृपेषु	+	अमात्येषु	....	....

उत्तरम्—

(i) लोभश्चेत्	: → श्
(ii) सद्विद्या	त् → द
(iii) इवेषवः	अ + इ → ए
(iv) किंप्रभुः	म् → ं
(v) सदानुकूलेषु	अ + आ → आ
(vi) यद्यस्ति	इ → य्
(vii) धनैरपयशः	: → र्
(viii) संशृणुते	म् → ं
(ix) शठास्तथाविधान्	: → स्
(x) नृपेष्वमात्येषु	उ → व्

प्रश्न 4. अधोलिखितविग्रहपदानां स्थाने समस्तपदानि लिखत—

विग्रहपदानि		**समस्तपदम्**
(i) न गुणेन	=	....
(ii) कुत्सितः सखा	=	....
(iii) न संवृत्ताङ्गान्	=	....
(iv) कुत्सितः प्रभुः	=	....
(v) शेभाना महिमा	=	....
(vi) मूढा धीः येषां ते	=	....
(vii) प्रसादस्य सदनम्	=	....
(viii) दयया सहितम्	=	....
(ix) कालस्य पर्ययात्	=	....
(x) सर्वाः च ताः सम्पदः	=	....
(xi) निघर्षणं च छेदनं च तापः, च ताडनम् च	=	....
(xii) सुधां मुञ्चन्ति इति	=	....

उत्तरम्—

विग्रहपदानि		**समस्तपदम्**
(i) न गुणेन	=	अगुणेन
(ii) कुत्सितः सखा	=	किंसखा
(iii) न संवृत्ताङ्गान्	=	असंवृत्ताङ्गान्

(*iv*) कुत्सितः प्रभुः = किंप्रभुः

(*v*) शेभाना महिमा = सुमहिमा

(*vi*) मूढा धीः येषां ते = मूढधियः

(*vii*) प्रसादस्य सदनम् = प्रसादसदनम्

(*viii*) दयया सहितम् = सदयम्

(*ix*) कालस्य पर्ययात् = कालपर्ययात्

(*x*) सर्वाः च ताः सम्पदः = सर्वसम्पदः

(*xi*) निघर्षणं च छेदनं च तापः, च ताडनम् च = निघर्षणच्छेदनतापताडनानि

(*xii*) सुधां मुञ्चन्ति इति = सुधामचो

प्रश्न 5. अधोलिखितपङ्क्तीनां भावम् अनुसृत्य पाठात् चित्वा पङ्क्तिं लिखत—

(*i*) मनुष्यस्य जीवने यदा लोभस्य भावना आगच्छति तदा तस्य अन्ये अवगुणाः महत्त्वहीनाः भवन्ति।

(*ii*) परनिन्दासमं निकृष्टं पातकं किमपि न अस्ति।

(*iii*) ये शठे शठतापूर्वकं न व्यवहरन्ति ते अविवेकिनः संसारे सफलाः न भवन्ति।

(*iv*) यः स्वहितैषिणः वार्तां सम्यक् न शृणाति सः योग्यः नृपः न भवति।

(*v*) यस्य समीपे श्रेष्ठा विद्या भवति, तस्य कृते अन्यधनानाम् आवश्यकता नास्ति यतो हि विद्याधनं सर्वधनप्रधानम्।

(*vi*) यः स्वस्वामिने सत्परामर्शं न ददाति सः योग्यः सचिवः (अमात्यः) भवितुम् न शक्नोति।

उत्तरम्— (*i*) लोभश्चेदगुणेन किम्?

(*ii*) पिशुनता यद्यस्ति किं पातकैः?

(*iii*) व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः।

(*iv*) हितान्न यः संशृणुते स किंप्रभुः?

(*v*) सद्विधा यदि किं धनैः?

(*vi*) स किंसखा साधु न शास्तियोऽधिपम्?

प्रश्न 6. अधोलिखितश्लोकयोः भावार्थं कोष्ठकात् उचितं पदं चित्वा पूरयत—

(क) ये जनाः कपटिषु.............आचरणं न कृत्वा सरलतया एव व्यवहरन्ति ते.............सदैव तिरस्कृताः, उपेक्षिताः भवन्ति। यथा बाणाः अनावृतं शरीरं...............विनाशयन्ति तथैव............अकुटिलान् जनान्.............. तान् विनाशयन्ति। (प्रविश्य, कपटस्य, शठाः मूढधियः, वञ्चयित्वा)

(ख) यः नृपाय................ददाति स एव योग्यः अमात्यः। यः राजा हितोपदेशकस्य मन्त्रिणः उपदेशं............. सः एव योग्यः स्वामी। यत्र राजा मन्त्रिणश्च परस्परं..............सर्वकार्यं सम्पादयन्ति,..........................राज्ये एव सर्वासां...................निवासः भवति। (स्वीकरोति, सम्पतीनां, सत्परामर्शं, तस्मिन्, विश्वसन्तः)

(ग) ते जनाः सर्वत्र............भवन्ति येषां जीवनं परोपकाराय एव भवति। वस्तुतः तेषां जीवनस्य प्रमुखं लक्ष्यम् एव ....अस्ति। ते सदैव अमृतवर्षिणीं मधुरां च...................वदन्ति। तेषां वदनम् प्रसन्नतायाः......... ....इव प्रतीयते। तेषां हृदयं................भवति। (वन्दनीयाः, निवासस्थानम्, वाणीम्, दयापूर्णम्, परोपकारः)

(घ) कालः परिवर्तनशीलः। सततप्रवहमाणेन कालेन सह विद्या अपि शनैः शनैः...............भवति। भौगोलिक परिवर्तनकारणात् कदापि............वृक्षाः अपि विच्छिन्नाः भूत्वा नश्यन्ति। जलस्य गन्तव्यं स्थानमपि कालेन ....भविष्यति परं यत्किमपि............अर्थात् दानरूपेण दीयते यत् च.................अर्थात् यज्ञाग्नौ हविष्यरूपेण दीयते, एतौ..........तिष्ठतः। (स्थिरमूलकाः, दत्तम्, विस्मृता, सततम्, जलहीनं, हुतम्)

उत्तरम्— (क) ये जनाः कपटिषु **कपटस्य** आचरणं न कृत्वा सरलतया एव व्यवहरन्ति ते **मूढधियः** सदैव तिरस्कृताः, उपेक्षिताः भवन्ति। यथा बाणाः अनावृतं शरीरं **प्रविश्य** विनाशयन्ति तथैव **शठाः** अकुटिलान् जनान् **वञ्चयित्वा** तान् विनाशयन्ति।

(ख) यः नृपाय **सत्परामर्शं** ददाति स एव योग्यः अमात्यः। यः राजा हितोपदेशकस्य मन्त्रिणः उपदेशं **स्वीकरोति** सः एव योग्यः स्वामी। यत्र राजा मन्त्रिणश्च परस्परं **विश्वसन्तः** सर्वकार्यं सम्पादयन्ति, **तस्मिन्** राज्ये एव सर्वासां **सम्पत्तीनां** निवासः भवति।

(ग) ते जनाः सर्वत्र **वन्दनीयाः** भवन्ति येषां जीवनं परोपकाराय एव भवति। वस्तुतः तेषां जीवनस्य प्रमुखं लक्ष्यम् एव **परोपकारः** अस्ति। ते सदैव अमृतवर्षिणीं मधुरां च **वाचं** वदन्ति। तेषां वदनम् प्रसन्नतायाः **निवासस्थानम्** इव प्रतीयते। तेषां हृदयं **दयापूर्णम्** भवति।

(घ) कालः परिवर्तनशीलः। सततप्रवहमाणेन कालेन सह विद्या अपि शनैः शनैः **विस्मृता** भवति। भौगोलिक परिवर्तनकारणात् कदापि **स्थिरमूलकाः** वृक्षाः अपि विच्छिन्नाः भूत्वा नश्यन्ति। जलस्य गन्तव्यं स्थानमपि कालेन **जलहीनं** भविष्यति परं यत्किमपि **दत्तम्** अर्थात् दानरूपेण दीयते यत् च **हुतम्** अर्थात् यज्ञाग्नौ हविष्यरूपेण दीयते, एतौ **सततम्** तिष्ठतः।

प्रश्न 7. कोष्ठकात् शुद्धः अर्थः चीयताम्—

(i)	प्रसादः	(कृपा, भवनम्)
(ii)	सुधा	(अमृतम्, चूर्णम)
(iii)	शुचिः	(शीलम्, पवित्रम्)
(iv)	पातकम्	(पतनम्, पापम्)
(v)	इषवः	(इच्छाः, बाणाः)
(vi)	निशिताः	(नष्टाः, तीक्ष्णाः)
(vii)	कनकम्	(सुवर्णम्, अन्नम्)
(viii)	तापः	(रुग्णः, ऊष्मा)
(ix)	ताडनम्	(कुट्टनम्, दण्डम्)
(x)	निघर्षणम्	(घोषणम्, घर्षणम्)

उत्तरम्—

(i)	प्रसादः	कृपा
(ii)	सुधा	अमृतम्
(iii)	शुचिः	पवित्रम्
(iv)	पातकम्	पापम्
(v)	इषवः	बाणाः
(vi)	निशिताः	तीक्ष्णाः
(vii)	कनकम्	सुवर्णम्
(viii)	तापः	ऊष्मा
(ix)	ताडनम्	कुट्टनम्
(x)	निघर्षणम्	घर्षणम्

प्रश्न 8. मञ्जूषायाः समुचितपदानां चयनं कृत्वा अधोदत्तशब्दानां पर्यायद्वयं लिखत—

शराः	अविवेकिनः	कर्णेजपता	मूर्खबुद्धयः	परनिन्दा	सचिवः
मन्त्री	बाणाः	आननम्.	निकेतम्	मुखम्	गृहम्

(i)	वदनम्	....	....
(ii)	पिशुनता	....	....
(iii)	सदनम्	....	....
(iv)	अमात्यः	....	....
(v)	मूढधियः	....	....
(vi)	इषवः	....	....

उत्तरम्— (i)	वदनम्	आननम्	मुखम्
(ii)	पिशुनता	कर्णेजपता	परनिन्दा
(iii)	सदनम्	निकेतम्	गृहम्
(iv)	अमात्यः	सचिवः	मन्त्री
(v)	मूढधियः	अविवेकिनः	मूर्खबुद्धयः
(vi)	इषवः	शराः	बाणाः

प्रश्न 9. उचितविभक्तिकं पदं चित्वा रिक्तस्थानानि पूरयत—

(i) ....सति गुणेन प्रयोजनं न भवति। (लोभस्ये, लोभे)

(ii) ....सत्याम् धनस्य आवश्यकता नास्ति। (सद्विद्यायां, सद्विद्यायाः)

(iii) परनिन्दायाः भावः यदि जीवने आगतः तदा..............प्रयोजनं न भवति। (पातकैः, पातकानाम्)

(iv) ये..................सरलतया व्यवहरन्ति ते सफलतां न लभन्ते। (धूर्तजनेभ्यः, धूर्तजनेषु)

(v) योग्यः नृपः................ध्यानेन हितं आकर्णयति। (आप्तजनात्, आत्मजनेन)

(vi) अपयशः यदि जीवने, किं ....। (मृत्योः, मृत्युना)

उत्तरम्— (i) **लोभे** सति गुणेन प्रयोजनं न भवति।

(ii) **सद्विद्यायां** सत्याम् धनस्य आवश्यकता नास्ति।

(iii) परनिन्दायाः भावः यदि जीवने आगतः तदा **पातकैः** प्रयोजनं न भवति।

(iv) य **धूर्तजनेषु** सरलतया व्यवहरन्ति ते सफलतां न लभन्ते।

(v) योग्यः नृपः **आप्तजनात्** ध्यानेन हितं आकर्णयति।

(vi) अपयशः यदि जीवने, किं **मृत्युना**।

प्रश्न 10. प्रकृतिप्रत्ययान् संयुज्य वाक्यपूर्तिं कुरुत—

(i) विद्या दत्ता (प्रवृद्ध + टाप्)....................भवति।

(ii) अष्टावक्रः जनकस्य सभां (प्र + विश् + ल्यप्)..................ज्ञानगर्वितान् पण्डितान् अपश्यत्।

(iii) रात्रिः (सम् + वृ + क्त)....................। किमर्थं बहिं (गम् + तुमुन्)....................इच्छसि?

(iv) नाहं (दा + क्त)....................सम्पत्तिं पुनः आददामि।

(v) साधोः शीलं सर्वत्र (वन्द् + अनीयर्)............भवति।

(vi) (पिशुन + तल्)......................मानवहृदयस्य दौर्बल्यम् एव।

(vii) (विनम्र + तल्)......................तु अलङ्करणं नरस्य।

(viii) देवालयं (गम् + क्त्वा)....................तेन दरिद्रेभ्यः फलानि (वि + तृ + क्त).................

(ix) नश्वरे संसारे (रम् + क्तिन्).................... मा भवतु।

(x) मृगेषु (नि + शि + क्त)........................... शराः न प्रयोक्तव्याः।

उत्तरम्— (i) विद्या दत्ता **प्रवृद्धा** भवति।

(ii) अष्टावक्रः जनकस्य सभां **प्रविश्य** ज्ञानगर्वितान् पण्डितान् अपश्यत्।

(iii) रात्रिः **संवृत्ता**। किमर्थं बहिः **गन्तुम्** इच्छसि?

(iv) नाहं **दत्तां** सम्पत्तिं पुनः आददामि।

(v) साधोः शीलं सर्वत्र **वन्दनीयं** भवति।

(vi) **पिशुनता** मानवहृदयस्य दौर्बल्यम् एव।

(vii) **विनम्रता** तु अलङ्करणं नरस्य।

(viii) देवालयं **गत्वा** तेन दरिद्रेभ्यः फलानि **वितीर्णानि।**

(ix) नश्वरे संसारे **रतिः** मा भवतु।

(x) मृगेषु **निशिताः** शराः न प्रयोक्तव्याः।

पाठ-विकासः

क. पाठे सङ्कलितानां श्लोकानां सन्दर्भाः

श्लोकः	सन्दर्भग्रन्थाः
वदनं प्रसादसदनं..........	सुभाषित्तरत्नभाण्डागारम्
शिक्षा क्षयं गच्छति.........	कर्णभारम्
यथा चतुर्भिः कनकं..........	चाणक्यनीतिः
व्रजन्ति ते मूढधियः........	किरातार्जुनीयम्
स किं सखा साधु..........	किरातार्जुनायम्
लोभश्चेद्गुणेन किं...........	नीतिशतकम्

कवि परिचयः

'कर्णभारम्' नाटकस्य रचयिता महाकविः भासः। तेन विरचितानि त्रयोदशनाटकानि उपलभ्यन्ते येषां नामानि अग्रिमे पाठ-विकासे प्रदत्तानि। 'चाणक्य नीतिः' इति ग्रन्थस्य प्रणेता आचार्यः चाणक्यः अस्ति यस्य विषये द्वितीयपाठे विस्तृतं विवरणं प्रदत्तम्।

नीतिशतकम् इति भर्तृहरेः सर्वश्रेष्ठा रचना। सः 'शृङ्गारशतकम्', 'नीतिशतकम्', 'वैराग्यशतकम्' इति शतकत्रयस्य रचयिता अस्ति। कथ्यते यत् सः योग्यः नृपः आसीत्। तेन विरचितेषु शतकेषु जीवनस्य विविधपक्षाणाम् अनुभवाः प्रदत्ताः। 'नीतिशतके' तु नैतिकमूल्यानि आधृत्य विविधाः श्लोकाः सन्ति।

'किरातार्जुनीयम्' इति नाम महाकाव्यम् महाकवि-भारवेः एकमात्र रचना अस्ति। अस्य महाकाव्यस्य कथा महाभारतात् सङ्गृहीता अस्ति। स्वल्पैः पदैः विशदार्थवर्णनम् एव भारवेः वैशिष्ट्यम्।

1. **कर्णभारम्**—नाटक के रचयिता महाकवि भास हैं। भास की तेरह रचनाएँ मिलती हैं? प्रतिज्ञायौगन्धरायण, स्वप्नवासवदत्तम्, प्रतिमानाटकम्, पञ्चरात्रम्, अभिषेकनाटकम्, मध्यमनव्यायोगः, अविनाटकम्, चारुदत्तम्, कर्णभारम्, इतवाक्यम्, घटोत्कचम्, अरुजङ्गम, बालचरितम्।

2. **नीतिशतकम्**—इसके रचयिता भर्तृहरि हैं। यह उनकी सर्वश्रेष्ठ रचना है। इसमें नैतिक मूल्यों को आधार बनाकर विविध श्लोक दिए गए हैं। वैराग्य तथा शृङ्गार के भावों पर आधारित भर्तृहरि के दो और शतक—'वैराग्यशतक' तथा 'शृङ्गारशतक' उपलब्ध हैं।

3. **किरातार्जुनीयम्**—यह महाकवि भारवि की एकमात्र रचना है। इसका कथानक 'महाभारत' से लिया गया है। इसमें किरात वेषधारी शिव तथा अर्जुन के युद्ध का प्रसंग है। थोड़े शब्दों में विशद अर्थ का वर्णन करने के कारण भारवि अर्थगौरव के लिए प्रसिद्ध हैं, यथा—'भारवेः अर्थगौरवम्'।

भावविकासः

प्रसादो यस्य वदने कृपा यस्यावलोकने।
वचने यस्य माधुर्यं स साक्षात्पुरुषोत्तमः।। (नराभरणम्)
न विकाराय विश्वस्योपकारायेव निर्मिताः।
स्फुरत्कारूण्यपीयूषवृष्ट्यः तत्त्वदृष्टयः।। (ज्ञानसारः)
घृष्टं घृष्टं पुनरपि पुनश्चन्दनं चारुगन्धं,
छिन्नं छिन्नं पुनरपि पुनः स्वादु चैवेक्षुदण्डम्।
दग्धं दग्धं पुनरपि पुनः काञ्चनं कान्तवर्णं
न प्राणान्ते प्रकृतिर्विकृतिर्जायते चोत्तमानाम्।। (सुभाषित्तरत्नभाण्डागारः)

दान-महिमा

दारिद्रय-व्याधि-दुःखानि बन्धनं व्यसनानि च।
अदातुः फलमेतानि तस्माद् दानं विशिष्यते।। (चाणक्यसार संग्रहः) 1/98
आयासशतलब्धस्य प्राणेभ्योऽपि गरीयसः।
गतिरेकैव वित्तस्य दानमन्या विपत्तयः।।
दानेन श्लाघ्यतां याति पशुपाषाणपादपाः।
दानमेव गुणः श्लाघ्यः किमन्यैर्गुणकोटिभिः।
गुणैरुत्तुङ्गतां याति नोच्चैरासनसंस्थितः।
प्रासादशिखरस्थोऽपि काकः किं गरुडायते।।
सत्येन धार्यते पृथिवी सत्येन तपते रविः।
सत्येन वाति वायुश्च सर्वं सत्ये प्रतिष्ठितम्।।
सर्वद्रव्येषु विद्यैव द्रव्यमाहुरनुत्तमम्।
अहार्यत्वादनर्घ्यत्वादक्षयत्वाच्च सर्वदा।।
यस्मिन् यथावर्त्तते यो मनुष्यः
तस्मितस्तथा वर्तिव्यं स धर्मः।
मायाचारो मायया वर्तितव्यः
'साध्वाचारः साधुना प्रत्युपेयः।। (महाभा. उ. पर्व 37/7)

ग. भाषाविकासः

महिमा- मूलशब्दः महिमन् पुल्लिङ्गे भवति।
महिमा-महिमानौ-महिमानः इति एवं रूपाणि भवन्ति।

विभक्ति प्रयोगः

किं, प्रयोजनम् इति पदैः सह तृतीयाविभक्ति प्रयोगः भवति-अगुणेन किम्, पातकैः किम्...........

तद्धितप्रत्ययाः

भाववाचकसंज्ञानिर्माणार्थम् शब्दैः सह 'त्व', 'तल्' इत्यादि प्रत्यानां प्रयोगः भवति यथा महत्त्वम्, महत्ता पिशुनत्वं, पिशुनता
'इन्' प्रत्ययस्य योगेन अपि संज्ञापदेभ्यः विशेषणपदानां निर्माणं भवति-
माया + इन् = मायिन्, मायी मायिनौ मायिनः

शब्दरूपाणि-

वाचः वाच् स्त्री. प्रथमा बहुवचनम् वाक् वाचौ वाचः
सम्पदः सम्पद् स्त्री. प्रथमा बहुवचनम् सम्पद् सम्पदौ सम्पदः

पदानुशीलनी

वदनम् (सं.)		मुखम्; मुख, चेहरा; face.
प्रसादसदनम् (सं.)	(प्रसादस्य सदनम्)	प्रसन्नतायाः निवासस्थानम्, प्रसन्नता का निवासस्थान; the abode of pleasure/happiness/pleasantness.
सदयम् (वि.)	(दयया सहितम् सह पूर्वपदबहु.)	दयया परिपूर्णम्: दया से भरा हुआ; full of compassion.
सुधामुचः (वि.)	(सुधां मुञ्चति इति सुधामुच् उप. तत्पु. प्र. बहु.)	अमृतवर्षिण्यः; अमृत बरसाती हुई (वाणियाँ),
वाचः (सं.)	(वाच् स्त्री. प्र. बहु. व.)	वाण्यः, वचनानि; वाणियाँ, वचन; words, sayings.

वन्द्याः (वि.)	(वन्द् यत् पु. प्र. ब. व.)	वन्दनीयाः; वन्दनीय, प्रणम्य, प्रशंसनीय; praiseworthy.
कालपर्ययात् (सं.)	(कालस्य पर्ययात्-ष.तत्पु.)	कालपरिवर्तनात्, काले व्यतीते; समय बीतने पर; with the lapse of time.
सुबद्धमूलाः (वि.)	(सुबद्धानि मूलानि येषां ते, बहु. प्र. ब. व.)	सुबद्धानि दृढानि मूलानि येषां ते; मजबूत जड़ों वाले; deep-rooted.
जलस्थानगतम् (वि.)	(जलस्य स्थानं गतम् ष. द्वि. तत्पु.)	जलस्य गन्तव्यस्थानं गत्वा; पानी के गन्तव्य स्थान तक गया हुआ; water that has reached its destination.
हुतम् (सं.)	(हु + क्त, नपुं. प्र. ए. व.)	अग्नौ हविः रूपेण समर्पितम्; अग्नि में दी गई आहुति; oblations to the fire.
दत्तम् (सं.)	(दा + क्त, नपुं. प्र. ए. व.)	दानम् कृतम्, प्रदतम्; दिया गया दान; that which has been donated.
तिष्ठति (क्रि.)	(स्था, लट् प्र. पु. ए. व.)	विराजते, नष्टं न भवति; स्थिर रहता है, स्थायी रहता है; remains unperished.
कनकम् (सं.)	(कनक नपुं. प्र. ए. व.)	स्वर्णम्; सोना; gold.
निघर्षणच्छेदनतापताडनैः (सं.)		(निघर्षणम् च छेदनम् च, तापः च, ताडनम् च तैः द्वन्द्व, तृ. ब. व.) निघर्षणेन, छेदनेन, तापेन, ताडनेन च; घिसने से, काटने से, गर्म करने से और पीटने से; by scrubbing, cutting, heating and beating.
अगुणेन (सं.)	(न गुणः इति अगुणः तेज नञ् तत्पु. तृ. ए. व.)	दोषेण; दोष से; by vices.
मूढधियः (वि.)	(मूढा धीः येषां ते प्र. ब. व.)	मूर्खमतयः; मूर्ख बुद्धि वाले, मन्दबुद्धिः fools, having low intelligence.
मायाविषु (वि.)	(माया + विन् स. ब. व.)	कपटिषु; कपटी लोगों में; with wicked people.
घ्नन्ति (क्रि.)	(हन् लट् प्र. पु. ब. व.)	मारयन्ति; मार डालते हैं; kill.
असंवृताङ्गान् (वि.)	(न संवृतानि असंवृतानि, असंवृतानि अङ्गानि येषां तान्)	येषाम् अङ्गानि वस्त्रादिभिः कवचादिभिः आवृतानि न सन्ति तान्; खुले हुए अङ्गों वाले लोगों को; people with parts of the body uncovered.
निशिताः (वि.)	(निशित, प्र. ब. व.)	तीक्ष्णाः; तेज; sharp-edged.
इषवः (सं.)	(इषु पु. प्र. ब. व.)	बाणाः, तीराः; बाण, तीर; arrows.
किंसखा (वि.)		कुत्सितः सखा; बुरा मित्र; bad friend.
साधु (क्रिया वि.) (अ.)		सम्यग्; भली प्रकार; in a nice way.
अधिपम् (सं.)	(अधि समन्तात् पाति रक्षति इति अधिपः तम् द्वि. ए. व.)	राजानम्, सम्राजम्; राजा को, सम्राट् को; to the king.
हितान् (सं.)	(हित द्वि. बहु. व.)	उपदेशान्; मन्त्रणाः; हितकर सलाहों को; advices.
किंप्रभुः	(कुत्सितः प्रभु.)	कुत्सितः स्वामी; बुरा मालिक; bad master.
अनुकूलेषु (वि.)	(अनुकूल स. ब. व.)	यदा स्वामी सेवकः च समदृष्टियुक्तौ भवतः तदा; स्वामी और सेवक के अनुकूल समदृष्टि होने पर; when the master and the servant see eye to eye with each other.
सर्वसम्पदः (सं.)	(सर्वाः सम्पदः कर्मधारय, प्र.ब.व.)	सर्वाः सम्पत्तयः; सारी सम्पत्तियाँ all the riches.